लेख

# सम्मान जनित हत्याओं की रिपोर्टिंग

**राजश्री दासगुप्ता**

**अगर आकांक्षाएं** पूरी हो सकतीं तो भारत एक जाति विहीन समाज होता और राज्य की ओर से धन की वर्षा होती! भारत को 'अवरोध-मुक्त देश' बनाने के लिए केंद्रीय सरकार ने राज्यों को हिदायत दी है कि जाति से बाहर विवाह करने वाले युगलों को आर्थिक सहायता दी जाये। पर यह निर्देश अंतर्धार्मिक विवाहों पर लागू नहीं होता। मीडिया के अनुसार यह सरकार की प्राथमिकताओं में शामिल नहीं है। सरकार धार्मिक कानूनों को लेकर किसी विवाद में पड़ने की इच्छुक नहीं है। फिलहाल राज्य की तवज्जो अंतर्जातीय विवाहों तक सीमित है।

देश के विभिन्न हिस्सों में दम्पतियों को जातीय मानकों का उल्लंघन व स्व-चयनित विवाह करने पर बहिष्कृत, अपमानित व कत्ल किया जा रहा है। उत्तर प्रदेश (2009) में *आली संस्था* के अनुसार सम्मान जनित हत्याओं के 70 मामले व सम्मान जनित अपराधों के 74 मामले सामने आये हैं। हरियाणा में हर माह 8-10 सम्मान जनित अपराध व हत्याओं की खबरें छपती हैं। नारीवादी इन हत्याओं के लिए 'सम्मान' शब्द के उपयोग की निंदा करती हैं क्योंकि इन संगीन अपराधों में सम्मान का कोई पक्ष मौजूद नहीं होता तथा इसका उपयोग इनके पीछे छिपे अपराधी मकसद को भी उजागर नहीं करता।

कार्यकर्त्ताओं का आरोप है कि पुलिस व निचली अदालतें जो राज्य का प्रतिनिधित्व करती हैं किसी भी मामले के निपटारे या संतोषजनक निदान में सहायक नहीं रही हैं। अक्सर पुलिस की प्रतिक्रिया सुरक्षा चाहने वाले युगलों के प्रति बेरुखी की होती है या फिर वे खुद ही अंतर्जातीय-अंतर्धार्मिक शादियां करने वालों को गिरफ़्तार कर लेते हैं और उन्हें प्रताड़ित करके मानव अधिकारों का उल्लंघन करते हैं।

निचली अदालतें भी इन्हीं पूर्वाग्रहों से ग्रस्त हैं और इनके फैसलों में कानूनी हस्तक्षेप व संवैधानिक कानूनों के बीच का अंतर साफ़तौर पर दिखाई पड़ता है। ऐसे कई मौके हैं जहां न्यायपालिका ने एक पितृसुलभ रवैया अपनाते हुए औरतों के संरक्षकों का पक्ष सुरक्षित रखा है, हालांकि लड़की ने अपनी उम्र और विवाह के लिए रज़ामंदी दोनों का हवाला कानून के समक्ष प्रस्तुत किया है।

इन मामलों में मिडिया की रिपोर्टिंग को लेकर *आली, लखनऊ* ने अखबार के पत्रकारों के साथ एक चर्चा आयोजित की थी जिसमें जमकर बहस हुई। 2007 में कोलकाता के रिज़वान-उर-रहमान मामले में एक चौकस मीडिया ने ही अहम भूमिका अदा की जिसके चलते मौत की सच्चाई सामने आई थी। रहमान की मौत समाज के संरक्षकों द्वारा सत्ता के दुरुपयोग का एक अपमानजनक पहलू है। तीन वरिष्ठ पुलिस अफ़सरों ने मशहूर तोड़ी व्यवसायिक परिवार की लड़की प्रियंका व उसके शिक्षक रहमान के विवाह करने पर उसे धमकाया व प्रताड़ित किया। 21 सितम्बर को शादी के तीन हफ़्ते बाद रहमान की लाश रेल की पटरी के पास पाई गई। शहर में इस मामले को लेकर काफी बवाल मचा और साम्प्रदायिक दंगे भड़कने के डर और सार्वजनिक दबाव के कारण राज्य सरकार ने दो पुलिस अफ़सरों को निलंबित कर दिया गया। इस मामले को जायज़ ठहराने वाले पुलिस कमिश्नर के ख़िलाफ़ भी कड़ी कार्यवाई की गई।

ये मामला दिलचस्प इसलिए बना क्योंकि रहमान की कहानी मीडिया में केवल रेल की पटरी पर पाई एक अनजान व्यक्ति के शव की खबर बनकर रह गई थी। परन्तु एक जागरूक मानव अधिकार कार्यकर्त्ता और बंगला टीवी चैनल के समाचार सम्पादक ने इस 'छोटी

खबर' के पीछे की 'बड़ी कहानी' और इसमें 'सत्ताधारियों का हाथ' होने की सच्चाई भांप ली। उसके प्रयासों से एक जांच-पड़ताल टीम का गठन हुआ जिसने इस मामले में पुलिस व व्यवसायिक तोड़ी परिवार तथा रहमान की संदिग्ध मृत्यु की छान-बीन शुरू की।

पर हर बार प्रेस इस तरह के मामलों को रिपोर्टिंग को लेकर चौकन्नी व संवेदनशील नहीं रहती है। लखनऊ गोष्ठी के सदस्यों के विचार में मीडिया के गिने-चुन पत्रकारों को छोड़कर इन युगलों के हालातों पर संवेदनशीलता से रिपोर्टिंग करने वालों या मौत के संदर्भ व जोड़ों पर होने वाली हिंसा के सांस्कृतिक-सामाजिक पहलू को समझने वालों की कमी दिखाई देती है। अक्सर अखबार की सुर्खियों में *भाई ने प्रेम दीवानी बहन का सर कलम कर दिया* या फिर *लड़की के भाइयों ने उतारा इश्क का भूत* जैसे भ्रमित व सनसनीख़ेज शीर्षक पढ़ने को मिलते हैं। खबरों की भाषा भी मुद्दे की अहमियत, सच्चाई व मानवाधिकार उल्लंघन को नज़रअंदाज़ करती है। युगलों के साथ होने वाली हिंसा या परिवार-समुदाय द्वारा की गई नृशंस हत्याओं को भी चोरी जैसी छुटपुट खबर की तरह रिपोर्ट किया जाता है।

एक पत्रकार के अनुसार 'क्राइम बीट' पत्रकारों को मामले की पूरी जानकारी पुलिस सूत्रों से ही मिलती है। जगह और आर्थिक साधनों की कमी के चलते इन पत्रकारों को मामले की तह तक जाने या घटना स्थल पर तहकीकात करने के लिए प्रोत्साहित नहीं किया जाता। मीडिया में छपी खबरों पर एक नज़र डालने पर यह ज़ाहिर होता है कि पत्रकार शायद ही कभी यह जानने की कोशिश करते हैं कि अभियुक्त 'बलात्कारी', 'अपहरणकर्त्ता' (अक्सर लड़की के माता-पिता लड़के को फंसाने के लिए यही आरोप लगाते हैं) है या फिर जोड़े के बीच रिश्ते में आपसी सहमति है। मीडिया पुलिस द्वारा दिए गये विवरण को बिना किसी छानबीन शब्द दर शब्द निगल जाता है।

बंगला व हिंदी प्रेस द्वारा छापी गई खबरों का लहजा अधिकतर सनसनीखेज़ व गपियाने वाला होता है। रिपोर्ट का रुख "नैतिकवादी" होता है कि किस प्रकार एक लड़की (न चाहते हुए भी) यौन आकर्षण (प्रेम नहीं) के जाल में गिरफ़्तार हो जाती है। खबर में परिवार के कठोर नियंत्रण और दो बालिग व्यक्तियों की चाहत पर सामुदायिक दखलअंदाज़ी पर कोई गौर नहीं किया जाता। दम्पति या तंग आकर आत्महत्या करने वाले साथी को मीडिया काव्यमयी 'भाषा' में 'विफल प्रेमी' जो गौरव के साथ मृत्यु का चुनाव करते हैं, के रूप में पेश करता है। इस सच को सामने लाने की कोई कोशिश नहीं की जाती कि सामाजिक अस्वीकृति व हतोत्साहित होने पर यह दुर्भाग्यपूर्ण कदम उठाया गया था।

युगलों के प्रति इस हिंसा की कड़ी निंदा करते हुए प्रेस विशेषतः अंग्रेज़ी मीडिया 'सम्मान जनित हत्या' को एक असहनशील व सांस्कृतिक रूप से पिछड़े ग्रामीण भारतीय व्यवहार तक सीमित कर देता है। यह मानसिकता ग्रामीण समुदायों को रूढ़िवादी, अविवेकी और पिछड़ा करार देती है और शहरी भारत की प्रगति और विकास की बढ़ती पहुंच को वापस नीचे धकेल देती है।

पर जहां अंग्रेज़ी प्रेस 'सम्मान हत्या' शब्द का उपयोग ग्रामीण समुदाय में युगलों के ख़िलाफ़ होने वाले अपराधों के लिए उदारता से करती है वही शहरी माहौल में होने वाले ऐसे ही कत्लों में इसका इस्तेमाल बिल्कुल नहीं होता— प्रेस ने रिज़वान-उर-रहमान व नितीश कटारा हत्याओं को बतौर 'सम्मान' जनित अपराध हत्या प्रस्तुत नहीं किया है।

नारीवादी इतिहासकार उमा चक्रवर्ती ने इस विषय पर एक साक्षात्कार के दौरान कहा था- "मीडिया इस तरह की हिंसा को ग्रामीण क्षेत्र के आधुनिकता विरोधी पिछड़ेपन के रूप में प्रस्तुत करता है। मीडिया में शायद ही कभी उन पितृसत्तात्मक अवरोधों व रिवाजों पर जानकारीयुक्त चर्चा या विश्लेषण किया जाता हो जो जोड़ों को हर कदम पर, आये दिन सहने पड़ते हैं और जो इन हिंसाओं को कायम रखते हैं।"

यह विडम्बना ही होगी अगर खुद मीडिया ही वास्तविक और संवेदनशील रिपोर्टिंग की जगह सनसनीखेज़ भाषा और खबरों पर केंद्रित बना रहेगा। और ऐसा करने पर मीडिया भी उन जोड़ों की राह में एक अवरोध बन जायेगा जो पुराने दकियानूसी रिवाजों व मानकों को अपने जीवनसाथी चुनने के संघर्ष के दौरान बाहर निकालकर एक 'अवरोध मुक्त देश' बनाने की राह संवार रहे हैं।

*साभार <thehoot.org>*

***राजश्री दासगुप्ता*** *पत्रकार, विकास कार्यकर्त्ता व शोधकर्त्ता हैं।*

ये कैसा न्याय?